संत गोस्वामी तुलसीदास: लोकनायकत्व और समन्वयवाद

-डॉ. दिव्या श्रीवास्तव
एम.ए.पी.एच.डी.

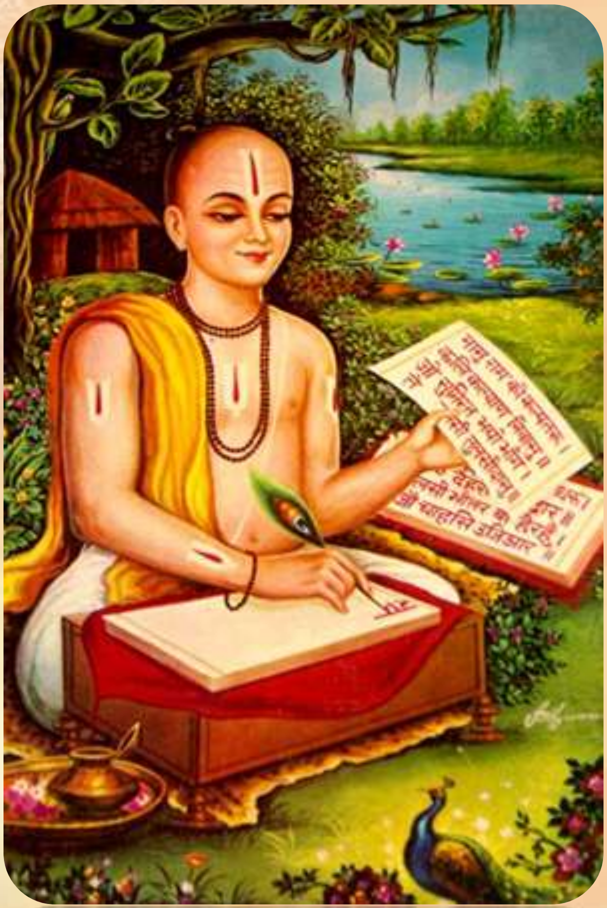

हिन्दी साहित्याकाश के चंद्रमा के नाम से विभूषित गोस्वामी एक ऐसी महत्वपूर्ण प्रतिभा थे, जो युगों में एक बार प्रकट होती हे और अपने ज्ञान-विज्ञान, भाव-विभाव से युगों तक जनता का मार्गदर्शन करती है। प्रकृति से संत और वृत्ती से कवि गोस्वामी जी की प्रतिभा जी की प्रतिभा इतनी विराट थी कि उसने भारतीय संस्कृति की सारी विराटता को आत्मसात् कर लिया था। वे महान द्रष्टा थे, परिणामत: महान स्रष्टा थे।

प्राचीनकाल मे जीवन चरित्र लिखने की परिपाटी नहीं थी और न ही किसी श्रेष्ठ साहित्यकार ने अपना जीवन वृत्त प्रस्तुत किया। ऐसे में मर्यादावाद के परम प्रणेता गोस्वामी जी से ऐसा करने की अपेक्षा कैसे की जा सकती थी। उनके जीवन-वृत के संबंध में हमे कतिपय समकालीन विद्वानों एवं कवियों की रचनाओं में प्राप्त संकेतों एवं उनके अपने ग्रंन्थों से प्राप्त संकेतों से ही जानकारी मिलती है जो न तो स्पष्ट है और न ही संपूर्ण। यूँ भी संत का परिचय उनके जन्म से नहीं, संतत्व से मिलता है और इस संदर्भ में करोड़ो लोगों के प्रेरणादायक ग्रंथ रामचरितमानस के प्रणेता को किसी जीवन की परिचय की अपेक्षा नहीं है।

गोस्वामी तुलसीदासजी जैसा बहुमुखी व्यक्तित्व संपन्न पुरूष मध्युग में कदाचित ही कोई मिलेगा। इस कर्म भूमि-भारत भूमि पर जन्म लेकर उन्होंने अपने व्यक्तितत्व के अनुरूप समन्वय का वह उदाहरण प्रस्तुत किया जो दुनिया के किसी भी अन्य व्यक्तितत्व में नितांत दुर्लभ है। उन्होंने अपने कृतित्व से लोक और शास्त्र का ही नहीं, वैराग्य और गार्हस्थ्य का, भक्ति और ज्ञान का, भाषा और संस्कृति का, निर्गुण और सगुण का, पुराण और काव्य का, पंडित और अज्ञानी का, ब्राह्मण और चांडाल का, आदर्श और व्यवहार का, प्रवृति और निवृत्ति का अद्भुत - अपूर्व समन्वय किया। उन्होंने तत्कालीन समस्त

क्षेत्रों में व्याप्त विषमता पर दृष्टिपात किया और अपने व्यक्तित्व एवं कृतित्व से सभी क्षेत्रों में समन्वय का सूत्रपात किया।

उनका व्यक्तित्व भक्त, दार्शनिक, पण्डित, कवि, नीतिज्ञ, समाज-सुधारक और विचारक रूपों का अद्भुत समन्वय है।

गोस्वामी जी अपने समन्वयवादी दृष्टिकोण के कारण ही लोकनायक की पदवी के अधिकारी हैं। वे बुद्ध के बाद भारत के सबसे बड़े लोकनायक हैं क्योकि लोकनायकत्व और समन्वयवाद एक दूसरे के पूरक है। एक के बिना दूसरा अधूरा है। कहने का आशय यह है लोकनायक ही समन्वयवादी हो सकता है और समन्वयकारी ही लोकनायक है। और फिर तुलसीदास जी तो समन्वयवादी होने के साथ मर्यादावादी भी हैं। समन्वय के आवेश में उन्होंने कहीं भी धर्म के असत्-रूप और लोक-धर्म की विरोधी प्रवृत्तियों से समझौता नहीं किया। लोक-मर्यादा का उल्लंघन चाहे वह किसी भी रूप में हो, उनके लिए असह्य था। उनके मतानुसार मर्यादा के बिना सामाजिक कल्याण आकाश कुसुम के समान है। अत: उनका समन्वयवाद मर्यादित है और मर्यादावाद लोक कल्याण के निमित्त - इस प्रकार वे एक साथ लोक कल्याण, समन्वय और लोक मर्यादा के अवतार स्वरूप हैं। तुलसी दास के समन्वयवाद को हम जीवन के विविध क्षेत्रों में पा सकते है-

धार्मिक क्षेत्र में - धर्म मानव-जीवन की एक अमूल्य वस्तु है जो उसे मानव बनाती है। एक मानवतावादी होने के कारण गोस्वामी जी ने अपने समय में प्रचलित समस्त धार्मिक मतों में समन्वय स्थापित करने का प्रयास किया-
शैव-वैष्णव - तत्कालीन समाज में धर्म के क्षेत्र में शिवोपासक शैवों एवं विष्णु-उपासक वैष्णवों के बीच व्याप्त कटुता के समाहार के लिए उन्होंने अपने काव्य में शिव के मुख से-
'सोई मम इष्ट देव रघुवीरा, सेवत जाहि सदा मुनि धीरा।'
कहलाया और राम के मुख से -
शंकर प्रिय मम द्रोही, शिव द्रोही मम दास। ते नर करहि कलप भरि, घोर नरक महुँ बास।।'
कहलाकर दोनों में समन्वय स्थापित कर दिया और दोनों मतों के मानने वालों को प्रेमपूर्वक रहने की प्रेरणा दी।

वैष्णव-शाक्त - रामचरितमानस में जहाँ वैष्ण व भक्ति की प्रबलता है वहीं उदभवस्थित संहारकारिणी, क्लेशहारिणी, सर्वश्रेयस्कारी कहकर राम की शक्ति की उपासना भी है। साथ ही श्रीराम की अर्धागिनी श्री सीता जी के द्वारा पार्वती जी की स्तुति भी कराई गई है-

नहिं तब आदि मध्य अवसाना। अमित प्रभाव वेद नहीं जाना।।
भव-भव विभव पराभव करिनि। विश्व विमोहनी स्ववस विहारिनि।।
श्राम भक्ति संप्रदाय और पुष्टिमार्ग - राम को परब्रह्म मानने वाले राम संप्रदाय और ब्रह्म की कृपा या अनुग्रह को ही सर्वोपरि स्वीकार करने वाले पुष्टि मार्ग के समन्वयक के लिए गोस्वामी जी की मधुर एवं वैचारिक कल्पना है-

'राम भगति मणि उरबस जाके। दु:ख लवसेस न सपनेहुँ ताके।।
चतुर सिरोमणी तेई जग माहीं। जे मनि लगि सुजतन कराहीं।।
सो मनि जदपि प्रकट जग अहई । राम कृपा बिनु नहिं कोउ लहई।।

अदैतवाद एवं विशिष्टाद्वैतवाद - रामचरितमानस में 'ईश्वर अंश जीव अविनाशी, चेतन अमल सहन सुखराशी'' और 'पल्लवत फूलत नवल नित संसार विटप नमामहे' आदि के द्वारा विशिष्टिाद्वैत की अवधारणा को पुष्ट करने वाले गोस्वामी जी विनयप्रत्रिका में शंकर के अद्वैतवाद को प्रस्तुत करते हुए अज, स्वतंत्र सर्वत्र सत्य तथा जीव और जगत को मिथ्या निरूपित करते है। यह उनका समन्यव वाद ही है जो उनसे यह कहलाता है-

कोउ कह सत्य झुठ कह कोऊ, जुगल प्रबल कोउ मानै।
तुलसीदास परिहरै तीनि भ्रम, सो आपन पहिचानै।।

सगुण और निर्गुण - तुलसीदास जी के काल से पूर्व से ही भक्ति के क्षेत्र में ब्रह्म के निर्गुण और सगुण रूपों की उपासना का संघर्ष चला आ रहा था। तुलसीदास जी ने स्वयं सगुण उपासक होते हुए भी इन दोनों का अपूर्व समन्वय प्रस्तुत कर इस भेट को मिटाने का सार्थक प्रयास किया-

'सगुनहिं अगुनहि नहिं कछु भेदा, वारि वीचि जिमि गावहिं वेदा।
अगुण अरूप अलख अज जोई, भगत प्रेम बस सगुन सो होई।।'

ज्ञान एवं भक्ति - अपने समय में प्रचलित ज्ञान मार्ग और भक्तिमार्ग के विवाद को गोस्वामी जी ने कुशलता के साथ तार्किक ढंग से हल करने की ओर कदम बढ़ाया है -

भगतिहिं ज्ञाहिं नहिं कछु भेदा, उभय हरहिं भव-संभव खेदा।।
साथ ही 'श्रुति सम्सत हरि भगति पथ संयुत विरति विवेक' के द्‌वारा दोनों मतों के समन्वय की प्रेरणा दी है।

नर औ नारायण - गोस्वामी जी ने 'भए प्रकट कृपाला दीनद्‌याला कौशिल्या हितकारी' कहकर उन्हीं ब्रह्म को कौशल्या-पुत्र या दशरथ-सूत के रूप में अवतरित दिखाकर अपने इष्टदेव को साधारण नर से ऊपर उठाते हुए नारायण के ब्रह्म पद पर आसीन कर दिया। इस प्रकार उन्होंने राम के रूप में नर और नारायण अथवा मानव और ब्रह्म का सुंदर समन्वय किया है-
'विनुपद चलै सुनैबिनु काना। कर बिनु करम करै विधि नाना।।
जेहि इमि गावहिं वेद बुध, जाहि धरहिं मुनि ध्यान। सो दशरथ सुत भगत हित, कोसलपित भगवान।।'

भाग्य और पुरूषार्थ - भाग्य एवं कर्म या पुरुषार्थ में से कौन अधिक प्रभावशाली है, यह सदा से विवाद का विषय रहा है। ऐसे में गोस्वामी जी पुरुषार्थ के समर्थन में कहते है-

'करम प्रधान विस्व करि राखा। जो जस करई सो तस फलु चाखा।।
ते भाग्यवाद के संबंध में उनके विचार है-

तुलसी जस भक्तिव्यता तैसेई मिलै सहाइ। आपु न आवै ताहि पहँ, ताहि तहाँ लै जाई।।
लेकिन इस विवाद को भी वे तार्किक परिणति तक पहुँचाते हैं और कर्मफल को ईश्वरेच्छा से जोड़ देते है-
'सुभ अरू असुभ कर्म अनुहारी। ईस देइफल हृदय विचारी।।
करई जो करमु पाव फल सोई, निगम नीति असि कह सब कोई।।'

सामाजिक क्षेत्र में - गोस्वामी जी ने सामाजिक जीवन का समन्वय करके दशरथ पुत्र राम को मर्यादा पुरूषोत्तम एवं आदर्श रूप प्रदान किया। सामाजिक समन्वय के रूप में तुलसीदास जी ने राम राज्य का आदर्श उपस्थित कर आदर्श जन-समाज का संगठन किया और उसमें लोक-धर्म की व्यवस्था की। राम, सीता, लक्ष्मण, भरत, हनुमान जैसे महान चरित्रों की अवरतारणा कर तुलसी ने हिंदू जाति को समाजशास्त्र, लोकशास्त्र और चरित्र संबंधी नए आदर्श दिए। उन्होंने आदर्श पुत्र, आदर्श पति, आदर्श भाई और आदर्श सेवक के उज्जवल चित्र को देकर जन-जीवन को उच्च बनाने की स्फूर्तिदायक प्रेरणा दी। उनके राम राज्य का आदर्श था-
'बरणाश्रम निज-निज धरम, निरत वेद -पथ लोग।

चलहिं सदा पावहिं सुख, नहिं भव शोक न रोग।।